परिवर्तन की लहर पैदा करने की कोशिश

. जयपुर में सम्पन्न हुए मीडिया शिक्षाविद सम्मेलन में इस बात को गंभीरता से स्वीकार किया गया कि मीडिया शिक्षा से जुड़े लोगों और मीडिया में काम कर रहे लोगों के बीच निरंतर आवाजाही बनी रहनी चाहिये। साथ ही वे लोग भी जुड़े रहें जो मीडिया के समाज पर पड़ रहे प्रभाव आदि का अध्ययन कर रहे हैं। यह सम्बद्धता कोरी औपचारिक न होकर व्यावहारिक हो और ऐसे अवसर उपलब्ध हों जिससे इनके बीच कार्यकारी संबंध बनें यानी पत्रकार अध्यापन के क्षेत्र में जायें और अध्यापक मीडिया में आकर काम करें। भले ही यह दो तीन वर्षों की समयावधि के लिए ही हो पर इससे एक-दूसरे के कार्य और उसके दबाव को समझा जा सकेगा। संभवत: यह पहला अवसर था जब मीडियाकर्मी, अध्येता और शिक्षक एक साथ मीडिया की समाज सरोकारी भूमिका पर चर्चा कर रहे थे। पांच कुलपतियों ने भी इस चर्चा में हिस्सा लिया। रेखांकित करने योग्य तो यह भी था कि इस चर्चा में 20 राज्यों के लोग थे और अध्येता इतने कि समय का टोटा भी पड़ता गया और कुछ लोगों को निराश होना पड़ा। यह आयोजन मूल्यानुगत मीडिया अभिक्रम समिति, लोक संवाद संस्थान तथा जनसंचार केन्द्र, राजस्थान विश्वविद्यालय की ओर से आयोजित था।

लगभग सभी लोगों ने यह तो स्वीकार किया कि समाज के सकारात्मक परिवर्तन के संदर्भ में मीडिया के मूल्यों में विचलन तो हुआ है। मीडिया से जुड़े लोगों ने इस पर कुछ सफाई देते हुए और उसके कुछ उजले कार्य बताते हुए स्वीकार किया तो अन्य लोगों ने उसके अच्छे कार्य और दिनों को याद करते हुए विचलन का बढ़ रहा आकार बताया। विचलन के निश्चय ही कारण तो रहे हैं और उसका समाधान बहुत आसान भी नहीं है। विशेषकर तब जब मीडिया मुनाफे की होड़ में आ गया हो और मीडिया में अब कैरियर बनाने की भीड़ सी लगने लगी हो। यह सभी जानते हैं कि बाजार के अपने नियम और व्यवहार हैं। वे पूरे नैतिक आदर्शों पर तथा मानवीय संवेदनाओं की कसौटियों पर खरे नहीं उतरते हैं। इसीलिए औसत व्यवसायी तथा उद्यमी धर्म तथा समाज के भले के लिए दान आदि में अन्य लोगों से आगे होता है क्योंकि उसका अपना कार्य मानवीय हितों की पूरी रक्षा करने में असफल हो रहा है, इसे वह जानता है। व्यवसाय और उसमें सफलता उसका धर्म हो चुका होता है और वह भी युध्द और प्रेम की तरह इसमें भी सफलता के लिए सभी मार्गों को खुला रखकर चलता है। मीडिया का वर्तमान संकट १९५० या उससे पूर्व के वर्षों के संदर्भ में बहुत हटकर है। तब

पत्रकार तथा पत्रकारिता उसके नियामक थे और अब मुनाफा और व्यवसायी उसके नियंत्रक है। पत्रकार भी अब न तो किसी सुधार के लिए समर्पित है। उसका समाजवादी और सुधारक मुखौटा सुविधाओं और वेतन की मोटी रकम के साथ जुड़ा रहता है। यह तो नहीं कहा जा सकता कि अब कोई उस भावना से आवेशित होकर नहीं आ रहा है। आते हैं, पर बदल जाते हैं। पी. साईनाथ, प्रभाष जोशी, एन.के. सिंह जैसे कम ही लोग इस धारा में रहकर काम कर पाते हैं।

सब चाहते तो हैं कि मीडिया को समाज के सरोकारों से जुड़कर काम करना चाहिये और वह बेहतर और मूल्याधारित समाज बनाने में अपना योगदान देता रहे, जैसा वह पहले देता था। पर यह सब हो कैसे, इस पर सब अलग-अलग तरह से सोचने लगते हैं। कुछ अब भी मीडिया को एक्टिविस्ट बनाने के पक्ष में हैं। कुछ कहते हैं कि वह तो एक मंच है समाज के जिम्मेदार लोगों के लिए जिस पर वे अपनी राय, योजना और उपाय बतायें। कुछ अब मानते हैं कि वह समाचारों, विचारों और प्रचार का व्यवसाय है। कुछ लोग तो उसे ही बाजार के रूप में प्रस्तुत कर देते हैं। कहते हैं कि हमारे पास इतने संभावित खरीददार हैं। यह संख्या उनके प्रसार की संख्या ही होती है। इत्यादि। कुल मिलाकर यह सब अब भेलपूरी की तरह से मिश्रित हो गया है।

इससे दो बातें तो साफ हैं। एक, मीडिया से समाज को अपेक्षा हैं क्योंकि उसका लोगों के विचार और व्यवहार पर प्रभाव है। दूसरा, उसके उपयोगकर्ताओं को अभी तक पूरा पता नहीं है कि मीडिया अब पूरी तरह से व्यवसाय बन चुका है और पत्रकार उस व्यवसाय के लिए काम कर रहा है।

जब ऐसा कहा जाता है तो पत्रकारों को उनकी अस्मिता या स्वाभिमान पर चोट लगती है। पर वे भी यह जानते हैं कि उनका स्वाभिमान अब बर्फ होता जा रहा है। बहुत ही कम ऐसे हैं मीडिया के मूल्यों, समाज की सरोकारिता और पत्रकारिता विशेषकर भारतीय पत्रकारिता के ऐतिहासिक अवदान की संगति में काम करने के लिए प्रतिबध्द हैं। असल में कौशल की स्थिति और उसके मूल्य पत्रकारिता के पर्यायवाची हो गये हैं या हो रहे हैं। लगता है जब यह पता चलेगा तो फिर एक लहर आयेगी। इस तरह के विमर्श, जो जयपुर में हुआ, उसी लहर को पैदा करने की कोशिशें हैं।

****